



समावेशी शिक्षा की चुनौतियाँ: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

Mr. Pushp Raj Gunjan

Assistant Professor, Teachers' Training College, Bhagalpur, Affiliated to Tilka Manjhi Bhagalpur University,
Bhagalpur, City- Bhagalpur, State-Bihar, Country- India, Email: pushprajgunjan1982@gmail.com

DOI : <https://doi.org/10.5281/zenodo.20688134>

ARTICLE DETAILS

Research Paper

Accepted: 25-05-2026

Published: 10-06-2026

Keywords:

व्हीलचेयर, बहुमंजिला
इमारतें, असंवेदनशील
शौचालय, टेक्टाइल पाथवे,
डिस्ट्रेक्सिया

ABSTRACT

समावेशी शिक्षा का अर्थ है—एक ऐसी शिक्षा प्रणाली जहाँ सामान्य बच्चों के साथ-साथ विशेष आवश्यकता वाले बच्चों (दिव्यांग, मानसिक या शारीरिक रूप से अक्षम, या सामाजिक-आर्थिक रूप से पिछड़े बच्चों) को एक ही कक्षा में, बिना किसी भेदभाव के एक साथ शिक्षा दी जाए। यह सिर्फ एक नीति नहीं, बल्कि एक मानवीय दृष्टिकोण है जो हर बच्चे को सम्मान से जीने और सीखने का अधिकार देता है। कागज़ पर यह व्यवस्था जितनी सुंदर और न्यायसंगत लगती है, ज़मीनी हकीकत में इसे लागू करना उतना ही चुनौतीपूर्ण है। भारत जैसे विविधतापूर्ण देश में समावेशी शिक्षा के मार्ग में कई बड़ी बाधाएँ हैं, जिन्हें नीचे विस्तार से समझा गया है: 1. बुनियादी ढांचे की कमी 2. प्रशिक्षित शिक्षकों की भारी कमी 3. सामाजिक दृष्टिकोण और पूर्वाग्रह 4. मूल्यांकन की चुनौतियाँ 5. विशेष शिक्षण सामग्री का अभाव 6. वित्तीय संसाधन और नीतियों का ढीला क्रियान्वयन

प्रस्तावना

समावेशी शिक्षा में दिव्यांग तथा सामान्य बच्चों को शामिल किया जाता है. दिव्यांग बच्चों की विभिन्न समस्याओं का सामना करना पड़ता है. इस समस्या एवं चुनौतियों की चाचा इस लेख में की गयी है .

1. बुनियादी ढांचे की कमी –

ज्यादातर सामान्य स्कूलों का ढांचा दिव्यांग बच्चों (Children with Special Needs - CWSN) के अनुकूल नहीं है। हमारे देश के अधिकांश स्कूल आज भी सामान्य बच्चों को ध्यान में रखकर बनाए गए हैं। विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए स्कूलों में बुनियादी सुविधाओं की भारी कमी है:



(a) **परिवहन (Transport):** घर से स्कूल आने-जाने के लिए सुलभ परिवहन साधनों का अभाव। घर से स्कूल तक की दूरी तय करना भी इन बच्चों और उनके अभिभावकों के लिए एक दैनिक संघर्ष है। सार्वजनिक परिवहन (बस, ऑटो) दिव्यांग-अनुकूल नहीं होते। बहुत कम स्कूलों के पास ऐसी बसें या वैन होती हैं जिनमें व्हीलचेयर को आसानी से चढ़ाया जा सके (Hydraulic Lifts)।

(b) **सहायक तकनीकों (Assistive Technology) तक पहुँच न होना:** आज के डिजिटल युग में भी सरकारी और कम बजट वाले निजी स्कूलों में विशेष रूप से डिजाइन किए गए कंप्यूटर की-बोर्ड, व्हीलचेयर, बैसाखी या सुनने वाली मशीनें (Hearing Aids) उपलब्ध कराने के लिए कोई ठोस व्यवस्था या अलग से बजट नहीं होता। आज के डिजिटल युग में तकनीक इन बच्चों की सबसे बड़ी मददगार बन सकती है, लेकिन बजट की कमी के कारण सरकारी और छोटे निजी स्कूलों में यह उपलब्ध नहीं है:

कंप्यूटरों में स्क्रीन रीडर सॉफ्टवेयर (जैसे NVDA या JAWS) का न होना।

स्पीच-टू-टेक्स्ट (बोलने को लिखने में बदलने वाले) उपकरणों की कमी।

कम सुनने वाले बच्चों के लिए क्लासरूम में 'हियरिंग एड्स' या लूप सिस्टम की व्यवस्था न होना।

(c) **विशेष शिक्षण सामग्री (TLM) की कमी :** समावेशी कक्षा में केवल ब्लैकबोर्ड और चॉक से काम नहीं चल सकता। वहाँ अलग-अलग क्षमताओं वाले बच्चों के लिए 'अधिगम सामग्री' (Teaching-Learning Material) की आवश्यकता होती है:

दृष्टिबाधित बच्चों के लिए: ब्रेल पुस्तकें (Braille books), ऑडियो क्लिप्स, और स्पर्श करने योग्य (Tactile) मानचित्र या ग्लोब उपलब्ध नहीं होते।

श्रवणबाधित बच्चों के लिए: विजुअल एड्स (Visual aids), क्वेश्चन वाले वीडियो और सांकेतिक भाषा (Sign Language) के चार्ट्स का अभाव होता है।

बौद्धिक दिव्यांगता वाले बच्चों के लिए: कॉन्सेप्ट्स को आसानी से समझाने वाले पहेलियाँ (Puzzles), फ्लैश कार्ड और विशेष शैक्षणिक खिलौने (Educational Toys) नहीं मिल पाते।

(d) **रैंप और रेलिंग का न होना:** स्कूल के मुख्य प्रवेश द्वार, कक्षाओं और प्रयोगशालाओं (Labs) में सीढ़ियाँ तो होती हैं, लेकिन व्हीलचेयर के लिए रैंप या पकड़ने के लिए रेलिंग नहीं होती। व्हीलचेयर का उपयोग करने वाले बच्चों के लिए क्लासरूम या ऊपरी मंजिलों तक पहुंचना बहुत मुश्किल होता है।



(e) **बहुमंजिला इमारतें:** यदि कक्षाएं पहली या दूसरी मंज़िल पर हैं, तो अस्थि-विकलांग (Orthopedically Handicapped) बच्चों के लिए बिना किसी लिफ्ट या एस्केलेटर के वहाँ पहुँचना लगभग असंभव हो जाता है। भारत के अधिकांश स्कूल भवन पुरानी स्थापत्य शैली (Architectural Style) पर बने हैं, जहाँ विशेष आवश्यकता वाले बच्चों (Children with Special Needs - CWSN) की गतिशीलता का ध्यान नहीं रखा गया है।

(f) **असंवेदनशील शौचालय (Inaccessible Toilets):** यह एक अत्यंत गंभीर लेकिन अक्सर अनदेखा किया जाने वाला मुद्दा है। स्कूलों में सामान्य शौचालय होते हैं जिनमें दिव्यांग बच्चों के अनुकूल कमोड, सपोर्ट बार (पकड़ने वाले हैंडल) या पर्याप्त जगह नहीं होती। इस वजह से कई विशेष आवश्यकता वाले बच्चे (विशेषकर लड़कियाँ) स्कूल आने से कतराते हैं या बीच में ही पढ़ाई छोड़ देते हैं।

(g) **टेक्टाइल पाथवे (Tactile Flooring):** गलियारों और रास्तों पर उभरी हुई टाइलें (Tactile Tiles) होनी चाहिए, ताकि दृष्टिबाधित बच्चे अपनी छड़ी (White Cane) या पैरों के स्पर्श से सुरक्षित रूप से रास्ता ढूँढ सकें।

2. प्रशिक्षित शिक्षकों की भारी कमी

एक सामान्य शिक्षक को यह तो पता होता है कि पूरी कक्षा को एक साथ कैसे पढ़ाना है, लेकिन वह विशेष बच्चों की विशिष्ट मनोवैज्ञानिक और शारीरिक आवश्यकताओं को समझने के लिए प्रशिक्षित नहीं होता। एक सामान्य शिक्षक को यह जानकारी नहीं होती कि दृष्टिबाधित (blind), मूक-बधिर (deaf & dumb), या ऑटिज्म (autism) से पीड़ित बच्चों को कैसे संभाला जाए।

(a) **विशेष प्रशिक्षण का अभाव:** शिक्षकों के पास ब्रेल लिपि (Braille) या सांकेतिक भाषा (Sign Language) का ज्ञान नहीं होता। शिक्षकों को यह नहीं पता होता कि यदि कक्षा में कोई बच्चा डिस्लेक्सिया (पढ़ने में कठिनाई) या ऑटिज्म से पीड़ित है, तो उसे किस तकनीक से पढ़ाया जाए।

(b) **रिसोर्स टीचर्स की कमी:** कई स्कूलों में स्पेशल एजुकेटर्स (Special Educators) के पद खाली पड़े हैं।

(c) **अतिरिक्त कार्यभार:** एक ही कक्षा में 40-50 बच्चों के बीच विशेष बच्चों पर व्यक्तिगत ध्यान देना एक शिक्षक के लिए बेहद तनावपूर्ण और कठिन हो जाता है।

(d) **विशेष कौशल विकास:** नियमित शिक्षकों को समय-समय पर ऐसा प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए जिससे वे समझ सकें कि विभिन्न आवश्यकताओं वाले बच्चों (Children with Special Needs - CWSN) को कैसे संभालना है।



(e) **विशेष शिक्षकों (Special Educators) की नियुक्ति:** हर स्कूल में कम से कम एक विशेष शिक्षक की नियुक्ति अनिवार्य होनी चाहिए, जो सामान्य शिक्षकों और विशेष बच्चों के बीच एक सेतु (Bridge) का काम कर सके।

3. सामाजिक दृष्टिकोण और पूर्वाग्रह

समावेशी शिक्षा के रास्ते में सबसे बड़ी दीवार समाज की सोच है। आज भी हमारे समाज, अभिभावकों और यहाँ तक कि शिक्षकों के मन में दिव्यांग बच्चों को लेकर एक नकारात्मक दृष्टिकोण या सहानुभूति (दया) का भाव रहता है, जबकि उन्हें दया की नहीं, समान अवसरों की जरूरत है।

(a) **सहपाठियों का व्यवहार:** कभी-कभी कक्षा के अन्य बच्चे अज्ञानतावश इन विशेष बच्चों का मज़ाक उड़ाते हैं या उन्हें अपने खेल में शामिल नहीं करते, जिससे वे हीन भावना (Inferiority Complex) के शिकार हो जाते हैं।

(b) **अन्य अभिभावकों का विरोध:** कई बार सामान्य बच्चों के माता-पिता को लगता है कि विशेष बच्चों के कारण उनके बच्चों की पढ़ाई की रफ्तार धीमी हो जाएगी, जो कि एक गलत धारणा है।

(c) **पूर्वाग्रहों का अंत:** विशेष बच्चों को 'बेचारा', 'लाचार' या 'बोझ' समझने की मानसिकता को बदलना।

(d) **भेदभाव और बुलिंग (Bullying):** कई बार सामान्य बच्चे इन विशेष बच्चों का मज़ाक उड़ाते हैं या उनके साथ खेलने से कतराते हैं।

(e) **अभिभावकों की सोच:** कुछ सामान्य बच्चों के माता-पिता को लगता है कि विशेष बच्चों के साथ पढ़ने से उनके बच्चों की पढ़ाई पर असर पड़ेगा, वहीं विशेष बच्चों के माता-पिता हीनभावना या डर के कारण उन्हें स्कूल नहीं भेजते।

4. पाठ्यक्रम और मूल्यांकन की चुनौतियां

समावेशी शिक्षा का उद्देश्य बच्चों के हिसाब से स्कूल को बदलना है, लेकिन हमारा कठोर पाठ्यक्रम और मूल्यांकन बच्चों को स्कूल के सांचे में ढलने पर मजबूर करता है। जब तक परीक्षाओं और किताबों को लचीला नहीं बनाया जाएगा, तब तक समावेशी शिक्षा का सपना पूरा नहीं हो सकता। हमारा मौजूदा परीक्षा और सिलेबस सिस्टम सबके लिए एक जैसा (One-size-fits-all) है, जो समावेशी शिक्षा के खिलाफ जाता है।

रटने पर जोर: परीक्षा प्रणाली केवल अंकों पर आधारित है, जिससे मानसिक रूप से कमजोर या डिस्लेक्सिया (Dyslexia) से पीड़ित बच्चों को अपनी प्रतिभा दिखाने का मौका नहीं मिलता।



लचीलेपन की कमी: पाठ्यक्रम बहुत कठोर है। जो बच्चा मानसिक रूप से थोड़ा धीमा है, उससे भी उसी समय सीमा में उसी कठिन परीक्षा को पास करने की उम्मीद की जाती है। सीखने की धीमी गति (Slow learners) वाले बच्चों के लिए पाठ्यक्रम में बदलाव नहीं किया जाता।

मूल्यांकन का पारंपरिक तरीका: केवल लिखित परीक्षाओं के आधार पर बच्चे की बुद्धिमत्ता को मापा जाता है, जो विशेष बच्चों के कौशल और उनकी प्रगति का सही मूल्यांकन नहीं कर पाता।

केवल लिखित परीक्षा पर जोर: हमारा मूल्यांकन तंत्र पूरी तरह से 3 घंटे की लिखित परीक्षा पर टिका है। अब सोचिए, एक बच्चा जो देख नहीं सकता, या जिसके हाथों में कंपन है (Cerebral Palsy), या जो अपनी बात को लिख कर व्यक्त नहीं कर सकता, वह इस परीक्षा में कैसे खुद को साबित करेगा?

व्यावहारिक ज्ञान की कमी: पाठ्यक्रम बहुत ज्यादा किताबी और थ्योरी पर आधारित होता है। दिव्यांग या विशेष आवश्यकता वाले बच्चों (CSWN) के लिए जीवन कौशल (Life Skills) या व्यावहारिक ज्ञान ज्यादा ज़रूरी होता है, जो मौजूदा पाठ्यक्रम में गायब रहता है।

5. विशेष शिक्षण सामग्री का अभाव

भारतीय स्कूलों में समावेशी शिक्षा (Inclusive Education) के तहत शिक्षण-अधिगम सामग्री (Teaching Learning Material - TLM) की कमी और उससे जुड़ी चुनौतियां एक बहुत बड़ा मुद्दा हैं। TLM का मतलब उन सभी सामग्रियों से है जिनका उपयोग शिक्षक बच्चों को समझाने के लिए करते हैं (जैसे किताबें, चार्ट, मॉडल्स, डिजिटल ऐप्स आदि)। एक समावेशी कक्षा में, जहाँ सामान्य बच्चों के साथ-साथ दृष्टिबाधित, श्रवणबाधित या बौद्धिक दिव्यांगता वाले बच्चे भी बैठते हैं, वहाँ एक ही तरह की पारंपरिक सामग्री (जैसे सिर्फ टेक्स्टबुक और ब्लैकबोर्ड) से सबको नहीं पढ़ाया जा सकता। शिक्षण-अधिगम सामग्री (TLM) के स्तर पर आने वाली मुख्य चुनौतियां निम्नलिखित हैं:

पारंपरिक और एकरस सामग्री (Rigid and Non-Adaptable Material): भारत के अधिकांश स्कूलों में आज भी केवल एनसीईआरटी (NCERT) या राज्य बोर्डों की सामान्य छपी हुई किताबों से पढ़ाया जाता है। ये किताबें दिव्यांग बच्चों की जरूरतों को ध्यान में रखकर नहीं बनाई गई हैं।

स्पर्श-सामग्री (Tactile Materials) की भारी कमी: दृष्टिबाधित (blind) बच्चों के लिए उभरे हुए नक्शे (raised maps), 3D मॉडल्स और ब्रेल लिपि में लिखी किताबों की बहुत कमी है। इसके बिना वे भूगोल, विज्ञान और गणित जैसे विषयों की कल्पना भी नहीं कर पाते।



संकेत भाषा (Sign Language) और विजुअल टूल्स का अभाव: श्रवणबाधित (बहरे) बच्चों के लिए ऐसी सामग्री की कमी है जिसमें सांकेतिक भाषा के वीडियो, सबटाइटल्स (subtitles) या कॉमिक्स-चित्रों के जरिए पाठ को समझाया गया हो।

बौद्धिक दिव्यांगता के लिए सरल सामग्री न होना: डिस्लेक्सिया, ऑटिज़्म या एडीएचडी (ADHD) वाले बच्चों के लिए पाठ्यसामग्री बहुत जटिल होती है। उनके लिए 'सिम्पलीफाइड टेक्स्ट' (सरल भाषा), बड़े फॉन्ट और फ्लैश कार्ड्स जैसी सामग्री आसानी से उपलब्ध नहीं होती।

6. वित्तीय संसाधन और नीतियों का ढीला क्रियान्वयन

भारतीय स्कूलों में समावेशी शिक्षा के मार्ग में "वित्तीय संसाधन और नीतियों का ढीला क्रियान्वयन" सबसे बुनियादी और गंभीर बाधाओं में से एक है। कागज़ पर नीतियां बहुत मजबूत और प्रगतिशील दिखती हैं, लेकिन जब उन्हें जमीन पर लागू करने (Ground Implementation) की बात आती है, तो बजट की कमी और प्रशासनिक दुलमुल रवैया आड़े आ जाता है। इस चुनौती को विस्तार से और गहराई से समझते हैं:

(a) **प्रति-बच्चा कम आवंटन (Low Per-Child Allocation):** विशेष आवश्यकता वाले बच्चों (CWSN) की पहचान, उनके मेडिकल सर्टिफिकेट बनवाने, और उनके वजीफे (Stipend) के लिए जो सरकारी बजट तय किया जाता है, वह बढ़ती महंगाई और जरूरत के हिसाब से बहुत कम है।

(b) **रिसोर्स रूम और इंफ्रास्ट्रक्चर के लिए बजट की कमी:** स्कूलों को 'बैरियर-फ्री' (बाधा रहित) बनाने के लिए केवल रैंप बनाना काफी नहीं है। सुलभ शौचालय (Accessible Toilets), विशेष लिफ्ट, और स्पर्श-पथ (Tactile Paths) के लिए भारी बजट की जरूरत होती है, जो स्कूलों को समय पर नहीं मिलता।

(c) **सहायक उपकरणों की अनुपलब्धता:** ब्रेल प्रिंटर, महंगे हियरिंग एड, और विशेष एजुकेशनल सॉफ्टवेयर (जैसे स्क्रीन रीडर्स) काफी महंगे होते हैं। सरकारी अनुदान (Government Grants) के अभाव में स्कूल इन्हें खरीद नहीं पाते।

(d) **जवाबदेही (Accountability) की कमी:** नीतियों में यह तो लिखा है कि हर स्कूल को समावेशी होना चाहिए, लेकिन यदि कोई स्कूल नियमों का पालन नहीं करता या दिव्यांग बच्चे को दाखिला देने से मना करता है, तो जमीनी स्तर पर सख्त कार्रवाई या मॉनिटरिंग (समीक्षा) का तंत्र बहुत कमजोर है।

(e) **स्पेशल एजुकेटर्स के पदों का खाली होना:** नीतियों के अनुसार स्कूलों में निश्चित छात्र-शिक्षक अनुपात (Pupil-Teacher Ratio) में 'स्पेशल एजुकेटर्स' होने चाहिए। लेकिन प्रशासनिक सुस्ती और भर्ती प्रक्रियाओं में देरी के कारण



आज भी हजारों पद खाली पड़े हैं। कई बार एक ही स्पेशल एजुकेटर को 4-5 स्कूलों का प्रभार दे दिया जाता है, जिससे वह किसी भी बच्चे पर ध्यान नहीं दे पाता।

(f) फंड का देर से जारी होना (Delayed Release of Funds): अक्सर सरकारी बजट को पास होने और जमीनी स्तर पर (स्कूलों तक) पहुंचने में महीनों लग जाते हैं। शैक्षणिक सत्र (Academic Session) आधा बीत जाने के बाद फंड आता है, जिससे सामग्री या सेवाएं समय पर नहीं मिल पातीं।

(g) अधूरा डेटा और कागजी कार्रवाई: जमीनी स्तर पर कितने बच्चों को वास्तव में मदद की जरूरत है, इसका सही सर्वे और डेटा ब्लॉक या जिला स्तर पर ठीक से अपडेट नहीं होता। इसके कारण योजनाएं केवल फाइलों तक सीमित रह जाती हैं। जब पैसा और प्रशासनिक इच्छाशक्ति दोनों कमजोर होते हैं, तो इसका सीधा असर कक्षा के भीतर दिखता है:

सुझाव:

- (1) समावेशी शिक्षा के अर्थ महत्त्व से सभी अवगत होना परमावश्यक है।
- (2) सरकारी और गैर सरकारी संगठनों के द्वारा देश भर के विद्यालयों, महाविद्यालयों के बुनियादी ढांचों में बदलाव लाने का प्रयास किया जाना चाहिए।
- (3) भारत सरकार के द्वारा अध्यापकों को विशेष प्रशिक्षण देने की व्यवस्था की जानी चाहिए ताकि अध्यापकों को विशेष आवश्यकताओं के वाले बच्चों को शिक्षण करवाने में सुविधा हो।
- (4) समावेशी शिक्षा के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण सकारात्मक सकारात्मक होनी चाहिए।
- (5) पाठ्यक्रम में लचीलापन लाने की आवश्यकता है।
- (6) सरकार के द्वारा दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम का कड़ाई से पालन करवाया जाना चाहिए।
- (7) विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को सभी को स्वीकार करना चाहिए।
- (8) बाल-केंद्रित शिक्षा वास्तविक रूप से धरातल पर लागू करने की आवश्यकता है।
- (9) शिक्षण सहायक सामग्री की प्रचुरता विद्यालयों में सुनिश्चित करना होगा।
- (10) अभिभावक, अधियमकर्ता, अध्यापक सभी की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करने की आवश्यकता है।



निष्कर्ष: विशेष उपकरणों की कमी, शिक्षण-अधिगम सामग्री का अभाव, वित्तीय संकट और नीतियों का ढीला क्रियान्वयन का विश्लेषण करने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि भारत में समावेशी शिक्षा (Inclusive Education) का विचार कागज़ी तौर पर और नीतियों के स्तर पर अत्यंत प्रगतिशील और मानवीय है, लेकिन व्यावहारिक धरातल पर इसे पूरी तरह उतारना अभी भी एक बहुत बड़ी चुनौती है।

Bibliography:

Suja, G. P., & Elamaran, S. (2024). Challenges of Inclusive Education in India. *Shanlax International Journal of Arts, Science and Humanities*, 11(3), 98-104.

Singh, J. D. (2016). Inclusive Education in India – Concept, Need and Challenges. *Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies*, 3(13), 3222-3232.

Sharma, R. (2017). Inclusive Education - Issues and Challenges. *SSRN Electronic Journal / Globus Journal of Progressive Education*, 4(2), 1-3.

Paul, D. (2026). Inclusive Education in India: Historical Evolution and Contemporary Practices Toward Learning Without Boundaries. *International Journal of Elementary Education*, 11(2).

MHRD. (2009). Right to Education Act (RTE), 2009. Ministry of Human Resource Development, Government of India.

Ministry of Social Justice and Empowerment. (2016). The Rights of Persons with Disabilities Act, 2016 (RPWD Act). Government of India.

UNESCO. (1994). The Salamanca Statement and Framework for Action on Special Needs Education. Paris: UNESCO.

Ministry of Education. (2020). National Education Policy 2020 (NEP 2020). Government of India.